ओ हरामजादे

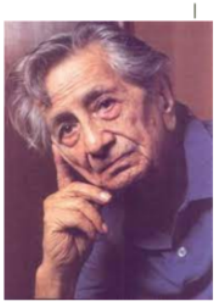

भीष्म साहनी

हिन्दी ADDA

ओ हरामजादे

घुमक्कड़ी के दिनों में मुझे खुद मालूम न होता कि कब किस घाट जा लगूँगा। कभी भूमध्य सागर के तट पर भूली बिसरी किसी सभ्यता के खंडहर देख रहा होता, तो कभी यूरोप के किसी नगर की जनाकीर्ण सड़कों पर घूम रह होता। दुनिया बड़ी विचित्र पर साथ ही अबोध और अगम्य लगती, जान पड़ता जैसे मेरी ही तरह वह भी बिना किसी धुरे के निरुद्देश्य घूम रही है।

ऐसे ही एक बार मैं यूरोप के एक दूरवर्ती इलाके में जा पहुँचा था। एक दिन दोपहर के वक्त होटल के कमरे में से निकल कर मैं खाड़ी के किनारे बैंच पर बैठा आती जाती नावों को देख रहा था, जब मेरे पास से गुजरते हुए अधेड़ उम्र की एक महिला ठिठक कर खड़ी हो गई। मैंने विशेष ध्यान नहीं दिया, मैंने समझा उसे किसी दूसरे चेहरे का मुगालता हुआ होगा। पर वह और निकट आ गई।

'भारत से आए हो?' उसने धीरे से बड़ी शिष्ट मुस्कान के साथ पूछा।

मैंने भी मुस्कुरा कर सिर हिला दिया।

'मैं देखते ही समझ गई थी कि तुम हिंदुस्तानी होगे।' और वह अपना बड़ा सा थैला बैंच पर रख कर मेरे पास बैठ गई।

नाटे कद की बोझिल से शरीर की महिला बाजार से सौदा खरीद कर लौट रही थी। खाड़ी के नीले जल जैसी ही उसकी आँखें थी। इतनी साफ नीली आँखें किवल छोटे बच्चों की ही होती हैं। इस पर साफ गौरी त्वचा। पर बाल खिचड़ी हो रहे थे और चेहरे पर हल्की हल्की रेखाएँ उतर आई थीं, जिनके जाल से, खाड़ी हो या रेगिस्तान, कभी कोई बच नहीं सकता। अपना खरीदारी का थैला बैंच पर रख कर वह मेरे पास तनिक सुस्ताने के लिए बैठ गई। वह अंग्रेज नहीं थी पर टूटी फूटी अंग्रेजी में अपना मतलब अच्छी तरह से समझा लेती थी।

'मेरा पति भी भारत का रहने वला है, इस वक्त घर पर है, तुम से मिल कर बहुत खुश होगा।'

मैं थोड़ा हैरान हुआ, इंग्लैंड और फ्रांस आदि देशों में तो हिंदुस्तानी लोग बहुत मिल जाते हैं। वहीं पर सैंकड़ों बस भी गए हैं, लेकिन यूरोप के इस दूर दराज के इलाके में कोई हिंदुस्तानी क्यों आ कर रहने लगा होगा। कुछ कुतूहलवश, कुछ वक्त काटने की इच्छा से मैं तैयार हो गया।

'चलिए, जरूर मिलना चाहूँगा।' और हम दोनों उठ खड़े हुए।

सड़क पर चलते हुए मेरी नजर बार बार उस महिला के गोल मटोल शरीर पर जाती रही। उस हिंदुस्तानी ने इस औरत में क्या देखा होगा जो घर बार छोड़ कर यहाँ इसके साथ बस गया है। संभव है, जवानी में चुलबुली और नटखट रही होगी। इसकी नीली आँखों ने कहर ढाए होंगे। हिंदुस्तानी मरता ही नीली आँखों और गोरी चमड़ी पर है। पर अब तो समय उस पर कहर ढाने लगा था। पचास पचपन की रही होगी। थैला उठाए

हुए साँस बार बार फूल रहा था। कभी उसे एक हाथ में उठाती और कभी दूसरे हाथ में। मैने थैला उसके हाथ से ले लिया और हम बतियाते हुए उसके घर की ओर जाने लगे।

'आप भी कभी भारत गई हैं?' मैंने पूछा।

'एक बार गई थी, लाल ले गया था, पर इसे तो अब लगता है बीसियों बरस बीत चुके हैं।'

'लाल साहब तो जाते रहते होंगे?'

महिला ने खिचड़ी बालों वाला अपना सिर झटक कर कहा 'नहीं, वह भी नहीं गया। इसलिए वह तुम से मिल कर बहुत खुश होगा, यहाँ हिंदुस्तानी बहुत कम आते हैं।'

तंग सीढ़ियाँ चढ़ कर हम एक फ्लैट में पहुँचे, अंदर रोशनी थी और एक खुला सा कमरा जिसकी चारों दीवारों के साथ किताबों से ठसाठस भरी अलमारियाँ रखीं थीं। दीवार पर जहाँ कहीं कोई टुकड़ा खाली मिला था, वहाँ तरह तरह के नक्शे और मानचित्र टाँग दिए गए थे। उसी कमरे में दूर, खिड़की के पास वाले कमरे में काले रंग का सूट पहने, साँवले रंग और उड़ते सफेद बालों वाला एक हिंदुस्तानी बैठा कोई पत्रिका बाँच रह था।

'लाल, देखो तो कौन आया है? इनसे मिलो। तुम्हारे एक देशवासी को जबर्दस्ती खींच लाई हूँ।' महिला ने हँस कर कहा।

वह उठ खड़ा हुआ और जिज्ञासा और कुतूहल से मेरी और देखता हुआ आगे बढ़ आया।

'आइए-आइए! बड़ी खुशी हुई। मुझे लाल कहते हैं, मैं यहाँ इंजीनियर हूँ। मेरी पत्नी ने मुझ पर बड़ा एहसान किया है जो आपको ले आई हैं।'

ऊँचे, लंबे कद का आदमी निकला। यह कहना कठिन था कि भारत के किस हिस्से से आया है। शरीर का बोझिल और ढीला ढाला था। दोनों कनपटियों के पास सफेद बालों के गुच्छे से उग आए थे जबकि सिर के ऊपर गिने चुने सफेद बाल उड़ से रहे थे।

दुआ-सलाम के बाद हम बैठे ही थे कि उसने सवालों की झड़ी लगा दी। 'दिल्ली शहर तो अब बहुत कुछ बदल गया होगा?' उसने बच्चों के से आग्रह के साथ पूछा।

'हाँ। बदल गया है। आप कब थे दिल्ली में?'

'मैं दिल्ली का रहने वाला नहीं हूँ। यों लड़कपन में बहुत बार दिल्ली गया हूँ। रहने वाला तो मैं पंजाब का हूँ, जालंधर का। जालंधर तो आपने कहाँ देखा होगा।'

'ऐसा तो नहीं, मैं स्वयं पंजाब का रहने वाला हूँ। किसी जमाने में जालंधर में रह चुका हूँ।'

मेरे कहने की देर थी कि वह आदमी उठ खड़ा हुआ और लपक कर मुझे बाँहों में भर लिया।

'ओ जालम! तू बोलना नहीं एँ जे जलंधर दा रहणवाले?'

मैं सकुचा गया। ढीले ढाले बुजुर्ग को यों उत्तेजित होता देख मुझे अटपटा सा लगा। पर वह सिर से पाँव तक पुलक उठा था। इसी उत्तेजना में वह आदमी मुझे छोड़ कर तेज तेज चलता हुआ पिछले कमरे की और चला गया और थोड़ी देर बाद अपनी पत्नी को साथ लिए अंदर दाखिल हुआ जो इसी बीच थैला उठाए अंदर चली गई थी।

'हेलेन, यह आदमी जलंधर से आया है, मेरे शहर से, तुमने बताया ही नहीं।'

उत्तेजना के कारण उसका चेहरा दमकने लगा था और बड़ी बड़ी आँखों के नीचे गुमड़ों में नमी आ गई थी।

'मैंने ठीक ही किया ना', महिला कमरे में आते हुए बोली। उसने इस बीच एप्रन पहन लिया था और रसोई घर में काम करने लग गई थी। बड़ी शालीन, स्निग्ध नजर से उसने मेरी और देखा। उसके चेहरे पर वैसी ही शालीनता झलक रही थी जो दसियों वर्ष तक शिष्टाचार निभाने के बाद स्वभाव का अंग बन जती है। वह मुस्कुरती हुई मेरे पास आ कर बैठ गई।

'लाल, मुझे भारत में जगह जगह घुमाने ले गया था। आगरा, बनारस, कलकत्ता, हम बहुत घूमे थे...'

वह बुजुर्ग इस बीच टकटकी बाँधे मेरी ओर देखे जा रहा था। उसकी आँखों में वही रूमानी किस्म का देशप्रेम झलकने लगा था जो देश के बाहर रहनेवाले हिंदुस्तानी की आँखों में, अपने किसी देशवासी से मिलने पर चमकने लगता है। हिंदुस्तानी पहले तो अपने देश से भागता है और बाद से उसी हिंदुस्तानी के लिए तरसने लगता है।

'भारत छोड़ने के बाद आप बहुत दिन से भारत नहीं गए, आपकी श्रीमती बता रही थी। भारत के साथ आपका संपर्क तो रहता ही होगा?'

और मेरी नजर किताबों से ठसाठस भरी आल्मारियों पर पड़ी। दीवारों पर टँगे अनेक मानचित्र भारत के ही मानचित्र थे।

उसकी पत्नी अपनी भारत यात्रा को याद करके कुछ अनमनी सी हो गई थी, एक छाया सी मानो उसके चेहरे पर डोलने लगी हो।

'लाल के कुछ मित्र संबंधी अभी भी जालंधर में रहते हैं। कभी-कभी उनका खत आ जाता है।' फिर हँस कर बोली, 'उनके खत मुझे पढ़ने के लिए नहीं देता। कमरा अंदर से बंद करके उन्हें पढ़ता है।'

'तुम क्या जानो कि उन खतों से मुझे क्या मिलता है!' लाल ने भावुक होते हुए कहा।

इस पर उसकी पत्नी उठ खड़ी हुई।

'तुम लोग जालंधर की गलियों में घूमो, मैं चाय का प्रबंध करती हूँ।' उसने हँस कर कहा और उन्हीं कदमों रसोई घर की और घूम गई।

भारत के प्रति उस आदमी की अत्यधिक भावुकता को देख कर मुझे अचंभा भी हो रहा था। देश के बाहर दशाब्दियों तक रह चुकने के बाद भी कोई आदमी बच्चों की तरह भावुक हो सकता है, मुझे अटपटा लग रहा था।

'मेरे एक मित्र को भी आप ही की तरह भारत से बड़ा लगाव था', मैंने आवाज को हल्का करते हुए मजाक के से लहजे में कहा, 'वह भी बरसों तक देश के बाहर रहता रहा था। उसके मन में ललक उठने लगी कि कब मैं फिर से अपने देश की धरती पर पाँव रख पाऊँगा।'

कहते हुए मैं क्षण भर के लिए ठिठका। मैं जो कहने जा रहा हूँ, शायद मुझे नहीं कहना चाहिए। लेकिन फिर भी धृष्टता से बोलता चल गया, ' चुनाँचे वर्षों बाद सचमुच वह एक दिन टिकट कटवा कर हवाई जहाज द्वारा दिल्ली जा पहुँचा। उसने खुद यह किस्सा बाद में मुझे सुनाया था। हवाई जहाज से उतर कर वो बाहर आया, हवाई अड्डे की भीड़ में खड़े खड़े ही वह नीचे की और झुका और बड़े श्रद्धा भाव से भारत की धरती को स्पर्श करने के बाद खड़ा हुआ तो देखा, बटुआ गायब था...'

बुजुर्ग अभी भी मेरी ओर देखे जा रहा था। उसकी आँखों के भाव में एक तरह की दूरी आ गई थी, जैसे अतीत की अँधियारी खोह में से दो आँखें मुझ पर लगी हों।

'उसने झुक कर स्पर्श तो किया यही बड़ी बात है,' उसने धीरे से कहा, 'दिल की साध तो पूरी कर ली।'

मैं सकुचा गया। मुझे अपना व्यवहार भौंड़ा-सा लगा, लेकिन उसकी सनक के प्रति मेरे दिल में गहरी सहानुभूति रही हो, ऐसा भी नहीं था।

वह अभी भी मेरी और बड़े स्नेह से देखे जा रहा था। फिर वह सहसा उठ खड़ा हुआ - ऐसे मौके तो रोज रोज नहीं आते। इसे तो हम सेलिब्रेट करेंगे।' और पीछे जा कर एक आलमारी में से कोन्याक शराब की बोतल और दो शीशे के जाम उठा लाया।

जाम में कोन्याक उँड़ेली गई। वह मेरे साथ बगलगीर हुआ, और हमने इस अनमोल घड़ी के नाम जाम टकराए।

'आपको चाहिए कि आप हर तीसरे चौथे साल भारत की यात्रा पर जाया करें। इससे मन भरा रहता है।' मैंने कहा।

इसने सिर हिलाया 'एक बार गया था, लेकिन तभी निश्चय कर लिया था कि अब कभी भारत नहीं आऊँगा।' शराब के दो एक जामों के बाद ही वह खुलने लगा था, और उसकी भावुकता में एक प्रकार की अत्मीयता का पुट भी आने लगा था। मेरे घुटने पर हाथ रख कर बोला, 'मैं घर से भाग कर आया था। तब मैं बहुत छोटा था। इस बात को अब लगभग चालीस साल होने को आए हैं', वह थोड़ी देर के लिए पुरानी यादों में खो गया, पर फिर, अपने को झटका सा दे कर वर्तमान में लौटा लाया। 'जिंदगी में कभी कोई बड़ी घटना जिंदगी का रुख नहीं बदलती, हमेशा छोटी तुच्छ सी घटनाएँ ही जिंदगी का रुख बदलती हैं। मेरे भाई ने केवल मुझे डाँटा था कि तुम पढ़ते लिखते नहीं हो, आवारा घूमते रहते हो, पिताजी का पैसा बरबाद करते हो... और मैं उसी रात घर से भाग गया था।'

कहते हुए उसने फिर से मेरे घुटने पर हाथ रखा और बड़ी आत्मीयता से बोला 'अब सोचता हूँ, वह एक बार नहीं, दस बार भी मुझे डाँटता तो मैं इसे अपना सौभाग्य समझता। कम से कम कोई डाँटने वाला तो था।'

कहते कहते उसकी आवाज लड़खड़ा गई, 'बाद में मुझे पता चला कि मेरी माँ जिंदगी के आखिरी दिनों तक मेरा इंतजार करती रही थी। और मेरा बाप, हर रोज सुबह ग्यारह बजे, जब डाकिए के आने का वक्त होता तो वह घर के बाहर चबूतरे पर आ कर खड़ा हो

जाता था। और इधर मैंने यह दृढ़ निश्चय कर रखा था कि जब तक मैं कुछ बन ना जाऊँ, घरवालों को खत नहीं लिखूँगा।'

एक क्षीण सी मुस्कान उसके होंठों पर आई और बुझ गई', फिर मैं भारत गया। यह लगभग पंद्रह साल बाद की बात रही होगी। मैं बड़े मंसूबे बाँध कर गया था...'

उसने फिर जाम भरे और अपना किस्सा सुनाने को मुँह खोला ही था कि चाय आ गई। नाटे कद की उसकी गोलमटोल पत्नी चाय की ट्रे उठाए, मुस्कराती हुई चली आ रही थी। उसे देख कर मन में फिर से सवाल उठा, क्या यह महिला जिंदगी का रुख बदलने का कारण बन सकती है?

चाय आ जाने पर वार्तालाप में औपचारिकता आ गई।

'जालंधर में हम माई हीराँ के दरवाजे के पास रहते थे। तब तो जालंधर बड़ा टूटा फूटा सा शहर था। क्यों, हनी? तुम्हे याद है, जालंधर में हम कहाँ पर रहे थे?'

'मुझे गलियों के नाम तो मालूम नहीं, लाल, लेकिन इतना याद है कि सड़कों पर कुत्ते बहुत घूमते थे, और नालियाँ बड़ी गंदी थीं, मेरी बड़ी बेटी - तब वह डेढ़ साल की थी - मक्खी देख कर डर गई थी। पहले कभी मक्खी नहीं देखी थी। वहीं पर हमने पहली बार गिलहरी को भी देखा था। गिलहरी उसके सामने से लपक कर एक पेड़ पर चढ़ गई तो वह भागती हुई मेरे पास दौड़ आई थी। ...और क्या था वहाँ?'

'...हम लाल के पुश्तैनी घर में रहे थे...'

चाय पीते समय हम इधर उधर कि बातें करते रहे। भारत की अर्थव्यवस्था की, नए नए उद्योग धंधों की, और मुझे लगा कि देश से दूर रहते हुए भी यह आदमी देश की गति-विधि से बहुत कुछ परिचित है।

'मैं भारत में रहते हुए भी भारत के बारे में बहुत कम जानता हूँ, आप भारत से दूर हैं, पर भारत के बारे में बहुत कुछ जानते हैं।'

उसने मेरी और देखा और हौले से मुस्करा कर बोला, 'तुम भारत में रहते हो, यही बड़ी बात है।'

मुझे लगा जैसे सब कुछ रहते हुए भी, एक अभाव सा, इस आदमी के दिल को अंदर ही अंदर चाटता रहता है - एक खला जिसे जीवन की उपलब्धियाँ और आराम आसायश, कुछ भी नहीं पाट सकता, जैसे रह रह कर कोई जख्म सा रिसने लगता हो।

सहसा उसकी पत्नी बोली, 'लाल ने अभी तक अपने को इस बात के लिए माफ नहीं किया कि उसने मेरे साथ शादी क्यों की।'

'हेलेन...'

मैं अटपटा महसूस करने लगा। मुझे लगा जैसे भारत को ले कर पति पत्नी के बीच अक्सर झगड़ा उठ खड़ा होता होगा, और जैसे इस विषय पर झगड़ते हुए ही ये लोग बुढ़ापे की दहलीज तक आ पहुँचे थे। मन में आया कि मैं फिर से भारत की बुराई करूँ ताकि यह सज्जन आपनी भावुक परिकल्पनाओं से छुटकारा पाएँ लेकिन यह कोशिश बेसूद थी।

'सच कहती हूँ', उसकी पत्नी कहे जा रही थी, 'इसे भारत में शादी करनी चाहिए थी। तब यह खुश रहता। मैं अब भी कहती हूँ कि यह भारत चला जाए, और मैं अलग यहाँ रहती रहूँगी। हमारी दोनो बेटियाँ बड़ी हो गई हैं। मैं अपना ध्यान रख लूँगी...'

वह बड़ी संतुलित, निर्लिप्त आवाज में कहे जा रही थी। उसकी आवाज में न शिकायत का स्वर था, न क्षोभ का। मानो अपने पति के ही हित की बात बड़े तर्कसंगत और सुचिंतित ढंग से कह रही हो।

'पर मैं जानती हूँ, यह वहाँ पर भी सुख से नहीं रह पाएगा। अब तो वहाँ की गर्मी भी बर्दाश्त नहीं कर पाएगा। और वहाँ पर अब इसका कौन बैठा है? माँ रही, न बाप। भाई ने मरने से पहले पुराना पुश्तैनी घर भी बेच दिया था।'

'हेलेन, प्लीज...' बुजुर्ग ने वास्ता डालने के से लहजे में कहा।

अबकी बार मैंने स्वयं इधर उधर की बातें छेड़ दीं। पता चला कि उनकी दो बेटियाँ हैं, जो इस समय घर पर नहीं थीं, बड़ी बेटी बाप की ही तरह इंजीनियर बनी थी, जबकी छोटी बेटी अभी युनिवर्सिटी में पढ़ रही थी, कि दोनो बड़ी समझदार और प्रतिभासंपन्न हैं। युवतियाँ हैं।

क्षण भर के लिए मुझे लगा कि मुझे इस भावुकता की ओर अधिक ध्यान नहीं देना चाहिए, इसे सनक से ज्यादा नहीं समझना चाहिए, जो इस आदमी को कभी कभी परेशान करने लगती है जब अपने वतन का कोई आदमी इससे मिलता है। मेरे चले जाने के बाद भावुकता का यह ज्वार उतर जाएगा और यह फिर से अपने दैनिक जीवन की पटरी पर आ जाएगा।

आखिर चाय का दौर खतम हुआ. और हमने सिगरेट सुलगाया। कोन्याक का दौर अभी भी थोड़े थोड़े वक्त के बाद चल रहा था। कुछ देर सिगरेटों सिगारों की चर्चा चली, इसी बीच उसकी पत्नी चाय के बर्तन उठा कर किचन की ओर बढ़ गई।

'हाँ, आप कुछ बता रहे थे कि कोई छोटी सी घटना घटी थी...'

वह क्षण भर के लिए ठिठका, फिर सिर टेढ़ा करके मुस्कुराने लगा, 'तुम अपने देश से ज्यादा देर बाहर नहीं रहे इस लिए नहीं जानते कि परदेश में दिल की कैफियत क्या होती है। पहले कुछ साल तो मैं सब कुछ भूले रहा पर भारत से निकले दस-बारह साल बाद भारत की याद रह रह कर मुझे सताने लगी। मुझ पर इक जुनून सा तारी होने लगा। मेरे व्यवहार में भी इक बचपना सा आने लगा। कभी कभी मैं कुर्ता-पायजामा पहन कर सड़कों पर घूमने लगता था, ताकि लोगों को पता चले कि मैं हिंदुस्तानी हूँ, भारत का रहने वाला हूँ। कभी जोधपुरी चप्पल पहन लेता, जो मैंने लंदन से मँगवाई थी, लोग सचमुच बड़े कुतूहल से मेरी चप्पल की ओर देखते, और मुझे बड़ा सुख मिलता। मेरा मन चाहता कि सड़कों पर पान चबाता हुआ निकलूँ, धोती पहन कर चलूँ। मैं सचमुच दिखाना चाहता था कि मैं भीड़ में खोया अजनबी नहीं हूँ, मेरा भी कोई देश है, मैं भी कहीं का रहने वाला हूँ। परदेस में रहने वाले हिंदुस्तानी के दिल को जो बात सबसे ज्यादा सालती है, वह यह कि वह परदेश में एक के बाद एक सड़क लाँघता चला जाए और उसे कोई जानता नहीं, कोई पहचानता नहीं, जबकि अपने वतन में हर तीसरा आदमी वाकिफ होता है। दिवाली के दिन मैं घर में मोमबत्तियाँ ला कर जला देता, हेलेन के माथे पर बिंदी लगाता, उसकी माँग में लाल रंग भरता। मैं इस बात के लिए तरस तरस जाता कि रक्षा बंधन का दिन हो और मेरी बहिन अपने हाथों से मुझे राखी बाँधे, और कहे 'मेरा वीर जुग जुग जिए!' मैं 'वीर' शब्द सुन पाने के लिए तरस तरस जाता। आखिर मैंने भारत जाने का फैसला कर लिया। मैंने सोचा, मैं हेलेन को भी साथ ले चलूँगा और अपनी डेढ़ बरस की बच्ची को भी। हेलेन को भारत की सैर कराऊँगा और यदि उसे भारत पसंद आया तो वहीं छोटी मोटी नौकरी करके रह जाऊँगा।'

'पहले तो हम भारत में घूमते-घामते रहे। दिल्ली, आगरा, बनारस... मैं एक एक जगह बड़े चाव से इसे दिखाता और इसकी आँखों में इसकी प्रतिक्रिया देखता रहता। इसे कोई जगह पसंद होती तो मेरा दिल गर्व से भर उठता।'

'फिर हम जलंधर गए।' कहते ही वह आदमी फिर से अनमना सा हो कर नीचे की और देखने लगा और चुपचाप सा हो गया, मुझे लगा जैसे वह मन ही मन दूर अतीत में खो

गया है और खोता चला जा रहा है। पर सहसा उसने कंधे झटक दिए और फर्श की ओर आँखे लगाए ही बोला, 'जालंधर में पहुँचते ही मुझे घोर निराशा हुई। फटीचर सा शहर, लोग जरूरत से ज्यादा काले और दुबले। सड़कें टूटी हुई। सभी कुछ जाना पहचाना था लेकिन बड़ा छोटा छोटा और टूटा फूटा। क्या यही मेरा शहर है जिसे मैं हेलेन को दिखाने लाया हूँ? हमारा पुश्तैनी घर जो बचपन में मुझे इतना बड़ा बड़ा और शानदार लगा करता था, पुराना और सिकुड़ा हुआ। माँ बाप बरसों पहले मर चुके थे। भाई प्यार से मिला लेकिन उसे लगा जैसे मैं जायदाद बाँटने आया हूँ और वह पहले दिन से ही खिंचा खिंचा रहने लगा। छोटी बहन की दस बरस पहले शादी हो चुकी थी और वह मुरादाबाद में जा कर रहने लगी थी। क्या मैं विदेशों में बैठा इसी नगर के स्वप्न देखा करता था? क्या मैं इसी शहर को देख पाने के लिए बरसों से तरसता रहा हूँ? जान पहचान के लोग बूढ़े हो चुके थे। गली के सिरे पर कुबड़ा हलवाई बैठा करता था। अब वह पहले से भी ज्यादा पिचक गया था, और दुकान में चौकी पर बैठने के बजाय, दुकान के बाहर खाट पर उकड़ूँ बैठा था। गलियाँ बोसीदा, सोई हुई। मैं हेलेन को क्या दिखाने लाया हूँ? दो तीन दिन इसी तरह बीत गए। कभी मैं शहर से बाहर खेतों में चला जाता, कभी गली बाजार में घूमता। पर दिल में कोई स्फूर्ति नहीं थी, कोई उत्साह नहीं था। मुझे लगा जैसे मैं फिर किसी पराए नगर में पहुँच गया हूँ।

तभी एक दिन बाजार में जाते हुए मुझे अचानक ऊँची सी आवाज सुनायी दी - 'ओ हरामजादे!' मैंने विशेष ध्यान नहीं दिया। यह हमारे शहर की परंपरागत गाली थी जो चौबिसों घंटे हर शहरी की जबान पर रहती थी। केवल इतना भर विचार मन में उठा कि शहर तो बूढ़ा हो गया है लेकिन उसकी तहजीब ज्यों की त्यों कायम है।

'ओ हराम जादे! अपने बाप की तरफ देखता भी नहीं?'

मुझे लगा जैसे कोई आदमी मुझे ही संबोधन कर रहा है। मैंने घूम कर देखा। सड़क के उस पार, साइकिलों की एक दुकान के चबूतरे पर खड़ा एक आदमी मुझे ही बुला रहा था।

मैंने ध्यान से देखा। काली काली फनियर मूँछों, सपाट गंजे सिर और आँखों पर लगे मोटे चश्मे के बीच से एक आकृति सी उभरने लगी। फिर मैंने झट से उसे पहचान लिया। वह तिलकराज था, मेरा पुराना सहपाठी।

'हरामजादे! अब बाप को पहचानता भी नहीं है!' दूसरे क्षण हम दोनों एक दूसरे की बाँहों में थे।

'ओ हराम दे! बाहर की गया, साहब बन गया तूँ?' तेरी साहबी विच मैं...' और उसने मुझे जमीन पर से उठा लिया। मुझे डर था कि वह सचमुच ही जमीन पर मुझे पटक न दे। दूसरे क्षण हम एक दूसरे को गालियाँ निकाल रहे थे।

मुझे लड़कपन का मेरा दोस्त मिल गया था। तभी सहसा मुझे लगा जैसे जालंधर मिल गया है, मुझे मेरा वतन मिल गया है। अभी तक मैं अपने शहर में अजनबी सा घूम रहा था। तिलकराज से मिलने की देर थी कि मेरा सारा परायापन जाता रहा। मुझे लगा जैसे मैं यहीं का रहने वाला हूँ। मैं सड़क पर चलते किसी भी आदमी से बात कर सकता हूँ, झगड़ सकता हूँ। हर इनसान कहीं का बन कर रहना चाहता है। अभी तक मैं अपने शहर में लौट कर भी परदेसी था, मुझे किसी ने पहचाना नहीं था। अपनाया नहीं था। यह गाली मेरे लिए वह तंतु थी, सोने की वह कड़ी थी जिसने मुझे मेरे वतन से, मेरे लोगों से, मेरे बचपन और लड़कपन से, फिर से जोड़ दिया था।

तिलकराज की और मेरी हरकतों में बचपना था, बेवकूफी थी। पर उस वक्त वही सत्य था, और उसकी सत्यता से आज भी मैं इनकार नहीं कर सकता। दिल दुनिया के सच बड़े भौंड़े पर बड़े गहरे और सच्चे होते हैं।

'चल, कहीं बैठ कर चाय पीते हैं', तिलकराज ने फिर गाली दे कर कहा। 'वह पंजाबी दोस्त क्या जो गाली दे कर, पक्कड़ तोल कर बगलगीर न हो जाए।'

हम दोनों, एक दूसरे की कमर में हाथ डाले, खरामा खरामा माई हीराँ के दरवाजे की ओर जाने लगे। मेरी चाल में पुराना अलसाव आ गया। मैं जालंधर की गलियों में यूँ घूमने लगा जैसे कोई जागीरदार अपनी जागीर में घूमता है। मैं पुलक पुलक रहा था। किसी किसी वक्त मन में से आवाज उठती, तुम यहाँ के नहीं हो, पराए हो, परदेसी हो, पर मैं अपने पैर और भी जोर से पटक पटक कर चलने लगता।

'चुच्चा हलवाई अभी भी वहीं पर बैठता है?'

'और क्या, तू हमें धोखा दे गया है, और लोगों ने तो धोखा नहीं दिया।'

इसी अल्हड़पन से, एक दूसरे की कमर में हाथ डाले, हम किसी जमाने में इन्हीं सड़कों पर घूमा करते थे। तिलकराज के साथ मैं लड़कपन में पहुँच गया था, उन दिनों का अलबेलापन महसूस करने लग था।

हम एक मैले कुचैले ढाबे में जा बैठे। वही मक्खियों और मैल से अटा गंदा मेज, पर मुझे परवाह नहीं थी, यह मेरे जालंधर के ढाबे का मेज था। उस वक्त मेरा दिल करता

कि हेलेन मुझे इस स्थिति में आ कर देखे, तब वह मुझे जान लेगी कि मैं कौन हूँ, कहाँ का रहने वाला हूँ, कि दुनिया में एक कोना ऐसा भी है जिसे मैं अपना कह सकता हूँ, यह गंदा ढाबा, यह धुआं भरी फटीचर खोह।

ढाबे से निकल कर हम देर तक सड़कों पर मटरगश्ती करते रहे यहाँ तक कि थक कर चूर हो गए। वह उसी तरह मुझे अपने घर के सामने तक ले गया। जैसे लड़कपन में मैं उसके साथ चलता हुआ, उसे उसके घर तक छोड़ने जाता था, फिर वह मुझे मेरे घर तक छोड़ने आता था।

तभी उसने कहा, 'कल रात खाना तुम मेरे घर पर खाओगे। अगर इनकार किया तो साले, यहीं तुझे गले से पकड़ कर नाली में घुसेड़ दूँगा।'

'आऊँगा,' मैंने झट से कहा।

'अपनी मेम को भी लाना। आठ बजे मैं तेरी राह देखूँगा। अगर नहीं आया तो साले हराम दे...'

और पुराने दिनों की ही तरह उसने पहले हाथ मिलाया और फिर घुटना उठा कर मेरी जाँघ पर दे मारा। यही हमारा विदा होने का ढंग हुआ करता था। जो पहले ऐसा कर जाए कर जाए। मैंने भी उसे गले से पकड़ लिया और नीचे गिराने का अभिनय करने लगा।

यह स्वाँग था। मेरी जालंधर की सारी यात्रा ही छलावा थी। कोई भावना मुझे हाँके चले जा रही थी और मैं इस छलावे में ही खोया रहना चाहता था।

दूसरे रोज, आठ बजते न बजते, हेलेन और मैं उसके घर जा पहुँचे। बच्ची को हमने पहले ही खिला कर सुला दिया था। हेलेन ने अपनी सबसे बढ़िया पोशाक पहनी, काले रंग का फ्राक, जिसपर सुनहरी कसीदाकारी हो रही थी, कंधों पर नारंगी रंग का स्टोल डाला, और बार बार कहे जाती : 'तुम्हारा पुराना दोस्त है तो मुझे बन सँवर कर ही जाना चाहिए ना।'

मैं हाँ कह देता पर उसके एक एक प्रसाधन पर वह और भी ज्यादा दूर होती जा रही थी। न तो काला फ्राक और बनाव सिंगार और न स्टोल और इत्र फुलेल ही जालंधर में सही बैठते थे। सच पूछो तो मैं चाहता भी नहीं था कि हेलेन मेरे साथ जाए। मैंने एकाध बार उसे टालने की कोशिश भी की, जिस पर वह बिगड़ कर बोली, 'वाह जी, तुम्हारा दोस्त हो और मैं उससे न मिलूँ? फिर तुम मुझे यहाँ लाए ही क्यों हो?'

हम लोग तो ठीक आठ बजे उसके घर पहुँच गए लेकिन उल्लू के पट्ठे ने मेरे साथ धोखा किया। मैं समझे बैठा था कि मैं और मेरी पत्नी ही उसके परिवार के साथ खाना खाएँगे। पर जब हम उसके घर पहुँचे तो उसने सारा जालंधर इकट्ठा कर रखा था, सारा घर मेहमानों से भरा था। तरह तरह के लोग बुलाए गए थे। मुझे झेंप हुई। अपनी ओर से वह मेरा शानदार स्वागत करना चाहता था। वह भी पंजाबी स्वभाव के अनुरूप ही। दोस्त बाहर से आए और वह उसकी खातिरदारी न करे। अपनी जमीन जायदाद बेच कर भी वह मेरी खातिरदारी करता। अगर उसका बस चलता तो वह बैंड बाजा भी बुला लेता। पर मुझे बड़ी कोफ्त हुई। जब हम पहुँचे तो बैठक वाला कमरा मेहमानों से भरा था, उनमें से अनेक मेरे परिचित भी निकल आए और मेरे मन में फिर हिलोर सी उठने लगी।

पत्नी से मेरा परिचय कराने के लिए मुझे बैठक में से रसोईघर की ओर ले गया। वह चूल्हे के पास बैठी कुछ तल रही थी। वह झट से उठ खड़ी हुई दुपट्टे के कोने से हाथ पोंछते हुए आगे बढ़ आई। उसका चेहरा लाल हो रहा था और बालों की लट माथे पर झूल आई थी। ठेठ पंजाबिन, अपनत्व से भरी, मिलनसार, हँसमुख। उसे यों उठते देख कर मेरा सारा शरीर झनझना उठा। मेरी भावज भी चूल्हे से ऐसे ही उठ आया करती थी, दुपट्टे के कोने से हाथ पोंछती हुई, मेरी बड़ी बहनें भी, मेरी माँ भी। पंजाबी महिला का सारा बाँकापन, सारी आत्मीयता उसमें जैसे निखर निखर आई थी। किसी पंजाबिन से मिलना हो तो रसोईघर की दहलीज पर ही मिलो। मैं सराबोर हो उठा। वह सिर पर पल्ला ठीक करती हुई, लजाती हुई सी मेरे सामने आ खड़ी हुई।

'भाभी, यह तेरा घरवाला तो पल्ले दर्जे का बेवकूफ है, तुम इसकी बातों में क्यों आ गईं?'

'इतना आडंबर करने की क्या जरूरत थी? हम लोग तो तुमसे मिलने आए हैं...'

फिर मैंने तिलकराज की और मुखातिब हो कर कह, 'उल्लू के पट्ठे, तुझे मेहमाननवाजी करने को किसने कहा था? हरामी, क्या मैं तेरा मेहमान हूँ? ... मैं तुझसे निबट लूँगा।'

उसकी पत्नी कभी मेरी ओर देखती, कभी अपने पति की ओर फिर धीरे से बोली, 'आप आएँ और हम खाना भी न करें? आपके पैरों से तो हमारा घर पवित्र हुआ है।'

वही वाक्य जो शताब्दियों से हमारी गृहणियाँ मेहमानों से कहती आ रही हैं।

फिर वह हमें छोड़ कर सीधा मेरी पत्नी से मिलने चली गई और जाते ही उसका हाथ पकड़ लिया और बड़ी आत्मीयता से उसे खींचती हुई एक कुर्सी की ओर ले गई। वह यों व्यवहार कर रही थी जैसे उसका भाग्य जागा हो। हेलेन को कुर्सी पर बैठाने के बाद वह स्वयं नीचे फर्श पर बैठ गई। वह टूटी फूटी अंग्रेजी बोल लेती थी और बेधड़क बोले जा रही थी। हर बार उनकी आँखें मिलतीं तो वह हँस देती। उसके लिए हेलेन तक अपने विचार पहुँचाना कठिन था लेकिन अपनी आत्मीयता और स्नेह भाव उस तक पहुँचाने में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई।

उस शाम तिलकराज की पत्नी हेलेन के आगे पीछे घूमती रही। कभी अंदर से कढ़ाई के कपड़े उठा लाती और एक-एक करके हेलेन को दिखाने लगती। कभी उसका हाथ पकड़ कर उसे रसोईघर में ले जाती, और उसे एक एक व्यंजन दिखाती कि उसने क्या क्या बनाया है और कैसे कैसे बनाया है। फिर वह अपनी कुल्लू की शाल उठा लाई और जब उसने देखा कि हेलेन को पसंद आई है, तो उसने उसके कंधों पर डाल दी।

इस सारी आवभगत के बावजूद हेलेन थक गई। भाषा की कठिनाई के बावजूद वह बड़ी शालीनता के साथ सभी से पेश आई। पर अजनबी लोगों के साथ आखिर कोई कितनी देर तक शिष्टाचार निभाता रहे? अभी ड्रिंक्स ही चल रहे थे जब वह एक कुर्सी पर थक कर बैठ गई। जब कभी मेरी नजर हेलेन की ओर उठती तो वह नजर नीची कर लेती, जिसक मतलब था कि मैं चुपचाप इस इंतजार में बैठी हूँ कि कब तुम मुझे यहाँ से ले चलो।

रात के बारह बजे के करीब पार्टी खत्म हुई और तिलकराज के यार दोस्त नशे में झूमते हुए अपने-अपने घर जाने लगे। उस वक्त तक काफी शोर गुल होने लगा था, कुछ लोग बहकने भी लगे थे। एक आदमी के हाथ से शराब का गिलास गिर कर टूट गया था।

जब हम लोग भी जाने को हुए और हेलेन भी उठ खड़ी हुई तो तिलकराज ने पंजाबी दस्तूर के मुताबिक कहा - बैठ जा, बैठ जा, कोई जाना वाना नहीं है।

'नहीं यार, अब चलें। देर हो गई है।'

उसने फिर मुझे धक्का दे कर कुर्सी पर फेंक दिया।

कुछ हल्का हल्का सरूर, कुछ पुरानी याद, तिलकराज का प्यार और स्नेह उसकी पत्नी का आत्मीयता से भरा व्यवहार, मुझे भला लग रहा था। सलवार कमीज पहने

बालों का जूड़ा बनाए, चूड़ियाँ खनकाती एक कमरे से दूसरे कमरे में जाती हुई तिलकराज की पत्नी मेरे लिए मेरे वतन का मुजस्समा बन गई थी, मेरे देश की समुची संस्कृति उसमें सिमट आई थी। मेरे दिल में, कहीं गहरे में, एक टीस सी उठी कि मेरे घर में भी कोई मेरे ही देश की महिला एक कमरे से दूसरे कमरे में घूमा करती, उसी की हँसी गूँजती, मेरे ही देश के गीत गुनगुनाती। वर्षों से मैं उन बोलों के लिए तरस गया था जो बचपन में अपने घर में सुना करता था।

हेलेन से मुझे कोई शिकायत नहीं थी। मेरे लिए उसने क्या नहीं किया था। उसने चपाती बनाना सीख लिया था। दाल छौंकना सीख लिया था। शादी के कुछ समय बाद ही वह मेरे मुँह से सुने गीत-टप्पे भी गुनगुनाने लगी थी। कभी कभी सलवार कमीज पहन कर मेरे साथ घूमने निकल पड़ती। रसोईघर की दीवार पर उसने भारत का एक मानचित्र टाँग दिया था जिस पर अनेक स्थानों पर लाल पेंसिल से निशान लगा रखे थे कि जालंधर कहाँ है और दिल्ली कहाँ है और अमृतसर कहाँ है जहाँ मेरी बड़ी बहन रहती थी। भारत संबंधी जो किताब मिलती, उठा लाती, जब कभी कोई हिंदुस्तानी मिल जाता उसे आग्रह अनुरोध करके घर ले आती। पर उस समय मेरी नजर में यह सब बनावट था, नकल थी, मुलम्मा था - इनसान क्यों नहीं विवेक और समझदारी के बल पर अपना जीवन व्यतीत कर सकता? क्यों सारा वक्त तरह तरह के अरमान उसके दिल को मथते रहते हैं?

'फिर?' मैंने आग्रह से पूछा।

उसने मेरी ओर देखा और उसके चेहरे की मांसपेशियों में हल्का सा कंपन हुआ। वह मुस्करा कर कहने लगा, 'तुम्हे क्या बताऊँ।' तभी मैं एक भूल कर बैठा। हर इनसान कहीं न कहीं पागल होता है और पागल बना रहना चाहता है... जब मैं विदा लेने लगा और तिलकराज कभी मुझे गलबहियाँ दे कर और कभी धक्का दे कर बिठा रहा था और हेलेन भी पहले से दरवाजे पर जा खड़ी हुई थी, तभी तिलकराज की पत्नी लपक कर रसोईघर की ओर से आई और बोली, 'हाय, आप लोग जा रहे हैं? यह कैसे हो सकता है? मैंने तो खास आपके लिए सरसों का साग और मक्के की रोटियाँ बनाई हैं।'

मैं ठिठक गया। सरसों का साग और मक्की की रोटियाँ पंजाबियों का चहेता भोजन है।

'भाभी, तुम भी अब कह रही हो? पहले अंटसंट खिलाती रही हो और अब घर जाने लगे हैं तो...'

'मैं इतने लोगों के लिए कैसे मक्की की रोटियाँ बना सकती थी? अकेली बनाने वाली जो थी। मैंने आपके लिए थोड़ी सी बना दी। यह कहते थे कि आपको सरसों का साग और मक्की की रोटी बहुत पसंद है...'

सरसों का साग और मक्की की रोटी। मैं चहक उठा, और तिलकराज को संबोधन करके कहा, 'ओ हरामी, मुझे बताया क्यों नहीं?' और उसी हिलोरे में हेलेन से कहा, 'आओ हेलेन, भाभी ने सरसों का साग बनाया है। यह तो तुम्हे चखना ही होगा।'

हेलेन खीज उठी। पर अपने को संयत कर मुस्कुराती हुई बोली, 'मुझे नहीं, तुम्हे चखना होगा।' फिर धीरे से कहने लगी, 'मैं बहुत थक गई हूँ। क्या यह साग कल नहीं खाया जा सकता?'

सरसों का साग, नाम से ही मैं बावला हो उठा था। उधर शराब का हल्का हल्का नशा भी तो था।

'भाभी ने खास हमारे लिए बनाया है। तुम्हे जरूर अच्छा लगेगा।'

फिर बिना हेलेन के उत्तर का इंतजार किए, साग है तो मैं तो रसोईघर के अंदर बैठ कर खाऊँगा। मैंने बच्चों की तरह लाड़ से कहा, 'चल बे, उल्लू के पट्ठे, उतार जूते, धो हाथ और बैठ जा थाली के पास! एक ही थाली में खाएँगे।'

छोटा सा रसोईघर था। हमारे अपने घर में भी ऐसा ही रसोईघर हुआ करता था जहाँ माँ अंगीठी के पास रोटियाँ सेंका करती थी और हम घर के बच्चे, साझी थालियों में झुके लुकमे तोड़ा करते थे।

फिर एक बार चिरपरिचित दृश्य मानों अतीत में से उभर कर मेरी आँखों के सामने घूमने लगा था और मैं आत्मविभोर हो कर उसे देखे जा रहा था। चूल्हे की आग की लौ में तिलकराज की पत्नी के कान का झूमर चमक चमक जाता था। सोने के काँटे में लाल नगीना पंजाबियों को बहुत फबता है। इस पर हर बार तवे पर रोटी सेंकने पर उसकी चूड़ियाँ खनक उठतीं और वह दोनो हाथों से गरम गरम रोटी तवे पर से उतार कर हँसते हुए हमारी थाली में डाल देती।

यह दृश्य मैं बरसों के बाद देख रहा था और यह मेरे लिए किसी स्वप्न से भी अधिक सुंदर और हृदयग्राही था। मुझे हेलेन की सुध भी नहीं रही। मैं बिल्कुल भूले हुए था कि बैठक में हेलेन अकेली बैठी मेरा इंतजार कर रही है। मुझे डर था कि अगर मैं रसोईघर में से उठ गया तो स्वप्न भंग हो जाएगा। यह सुंदरतम चित्र टुकड़े टुकड़े हो जाएगा।

लेकिन तिलकराज की पत्नी उसे नहीं भूली थी। वह सबसे पहले एक तशतरी में मक्की की रोटी और थोड़ा सा साग और उस पर थोड़ा सा मक्खन रख कर हेलेन के लिए ले गई थी। बाद में भी, दो एक बार बीच बीच में उठ कर उसके पास कुछ न कुछ ले जाती रही थी।

खाना खा चुकने पर, जब हम लोग रसोईघर में से निकल कर बैठक में आए तो हेलेन कुर्सी में बैठे बैठे सो गई थी और तिपाई पर मक्की की रोटी अछूती रखी थी। हमारे कदमों की आहट पा कर उसने आँखें खोलीं और उसी शालीन शिष्ट मुस्कान के साथ उठ खड़ी हुई।

विदा ले कर जब हम लोग बाहर निकले तो चारों ओर सन्नाटा छाया था। नुक्कड़ पर हमें एक ताँगा मिल गया। ताँगे में घूमे बरसों बीत चुके थे, मैंने सोचा हेलेन को भी इसकी सवारी अच्छी लगेगी। पर जब हम लोग ताँगे में बैठ कर घर की ओर जाने लगे तो रास्ते में हेलेन बोली, 'कितने दिन और तुम्हारा विचार जालंधर में रहने का है?'

'क्यों अभी से ऊब गईं क्या?' आज तुम्हे बहुत परेशान किया ना, आई ऐम सारी।'

हेलेन चुप रही, न हूँ, न हाँ।

'हम पंजाबी लोग सरसों के साग के लिए पागल हुए रहते हैं। आज मिला तो मैंने सोचा जी भर के खाओ। तुम्हे कैसे लगा?'

'सुनो, मैं सोचती हूँ मैं यहाँ से लौट जाऊँ, तुम्हारा जब मन आए, चले आना।'

'यह क्या कह रही हो हेलेन, क्या तुम्हे मेरे लोग पसंद नहीं हैं?'

भारत में आने पर मुझे मन ही मन कई बार यह खयाल आया था कि अगर हेलेन और बच्ची साथ में नहीं आतीं तो मैं खुल कर घूम फिर सकता था। छुट्टी मना सकता था। पर मैं स्वयं ही बड़े आग्रह से उसे अपने साथ लाया था। मैं चाहता था कि हेलेन मेरा देश देखे, मेरे लोगों से मिले, हमारी नन्ही बच्ची के संस्कारों में भारत के संस्कार भी जुड़ें और यदि हो सके तो मैं भारत में ही छोटी मोटी नौकरी कर लूँ।

हेलेन की शिष्ट, संतुलित आवाज में मुझे रुलाई का भास हुआ। मैंने दुलार से उसे आलिंगन में भरने की कोशिश की। उसमे धीरे से मेरी बाँह को परे हटा दिया। मुझे दूसरी बार उसके इर्द-गिर्द अपनी बाँह डाल देनी चाहिए थी, लेकिन मैं स्वयं तुनक उठा।

'तुम तो बड़ी डींग मारा करतीं हो कि तुम्हे कुछ भी बुरा नहीं लगता और अभी एक घंटे में ही कलई खुल गई।'

ताँगे में हिचकोले आ रहे थे। पुराना फटीचर सा ताँगा था, जिसके सब चूल ढीले थे। हेलेन को ताँगे के हिचकोले परेशान कर रहे थे। ऊबड़-खाबड़, गड्ढों से भरी सड़क पर हेलेन बार बार सँभल कर बैठने की कोशिश कर रही थी।

'मैं सोचती हूँ, मैं बच्ची को ले कर लौट जाऊँगी। मेरे यहाँ रहते तुम लोगों से खुल कर नहीं मिल सकते।' उसकी आवाज में औपचारिकता का वैसा ही पुट था जैसा सरसों के साग की तारीफ करते समय रहा होगा, झूठी तारीफ और यहाँ झूठी सद्भावना।

'तुम खुद सारा वक्त गुमसुम बैठी रही हो। मैं इतने चाव से तुम्हे अपना देश दिखाने लाया हूँ।'

'तुम अपने दिल की भूख मिटाने आए हो, मुझे अपना देश दिखाने नहीं लाए', उसने स्थिर, समतल, ठंडी आवाज में कहा, और अब मैंने तुम्हारा देश देख लिया है।'

मुझे चाबुक सी लगी।

'इतना बुरा क्या है मेरे देश में जो तुम इतनी नफरत से उसके बारे में बोल रही हो? हमारा देश गरीब है तो क्या, है तो हमारा अपना।'

'मैंने तुम्हारे देश के बारे में कुछ नहीं कहा।'

'तुम्हारी चुप्पी ही बहुत कुछ कह देती है। जितनी ज्यादा चुप रहती हो उतना ही ज्यादा विष घोलती हो।'

वह चुप हो गई। अंदर ही अंदर मेरा हीनभाव जिससे उन दिनों हम सब हिंदुस्तानी ग्रस्त हुआ करते थे, छटपटाने लगा था। आक्रोश और तिलमिलाहट के उन क्षणों में भी मुझे अंदर ही अंदर कोई रोकने की कोशिश कर रहा था। अब बात और आगे नहीं बढ़ाओ, बाद में तुम्हे अफसोस होगा, लेकिन मैं बेकाबू हुआ जा रहा था। अँधेरे में यह भी नहीं देख पाया कि हेलेन की आँखें भर आई हैं और वह उन्हें बार बार पोंछ रही है। ताँगा हिचकोले खाता बढ़ा जा रहा था और साथ साथ मेरी बौखलाहट भी बढ़ रही थी। आखिर ताँगा हमारे घर के आगे जा खड़ा हुआ। हमारे घर की बत्ती जलती छोड़ कर घर के लोग अपने अपने कमरों में आराम से सो रहे थे। कमरे मे पहुँच कर हेलेन ने फिर

एक बार कहा, 'तुम्हे किसी हिंदुस्तानी लड़की से शादी करनी चाहिए थी। उसके साथ तुम खुश रहते। मेरे साथ तुम बँधे बँधे महसूस करते हो।'

हेलेन ने आँख उठा कर मेरी ओर देखा। उसकी नीली आँखें मुझे काँच कि बनी लगी, ठंडी, कठोर, भावनाहीन, 'तुम सीधा क्यों नही कहती हो कि तुम्हे एक हिंदुस्तानी के साथ ब्याह नहीं करना चाहिए था। मुझ पर इस बात का दोष क्यों लगाती हो?'

'मैंने ऐसा कुछ नहीं कहा', बह बोली और पार्टीशन के पीछे कपड़े बदलने चली गई।

दीवार के साथ एक ओर हमारी बच्ची पालने में सो रही थी। मेरी आवाज सुन कर वह कुनकुनाई, इस पर हेलेन झट से पार्टीशन के पीछे से लौट आई और बच्ची को थपथपा कर सुलाने लगी। बच्ची फिर से गहरी नींद में सो गई। और हेलेन पार्टीशन की ओर बढ़ गई। तभी मैंने पार्टीशन की ओर जा कर गुस्से से कहा, 'जब से भारत आए हैं, आज पहले दिन कुछ दोस्तों से मिलने का मौका मिला है, तुम्हे वह भी बुरा लगा है। लानत है ऐसी शादी पर!'

मैं जानता था पार्टीशन के पीछे से कोई उत्तर नहीं आएगा। बच्ची सो रही हो तो हेलेन कमरे में चलती भी दबे पाँव थी। बोलने का तो सवाल ही नहीं उठता।

पर वह उसी समतल आवाज में धीरे से बोली, तुम्हे मेरी क्या परवाह। तुम तो मजे से अपने दोस्त की बीवी के साथ फ्लर्ट कर रहे थे।'

'हेलेन!' मुझे आग लग गई, 'क्या बक रही हो।'

मुझे लगा जैसे उसने एक अत्यंत पवित्र, अत्यंत कोमल और सुंदर चीज को एक झटके में तोड़ दिया हो।

'तुम समझती हो मैं अपने मित्र की बीवी के साथ फ्लर्ट कर रहा था?'

'मैं क्या जानूँ तुम क्या कर रहे थे। जिस ढंग से तुम सारा वक्त उसकी ओर देख रहे थे...'

दूसरे क्षण मैं लपक कर पार्टीशन के पीछे जा पहुँचा और हेलेन के मुँह पर सीधा थप्पड़ दे मारा।

उसने दोनो हाथों से अपना मुँह ढाँप लिया। एक बार उसकी आँखें टेढ़ी हो कर मेरी ओर उठीं। पर वह चिल्लाई नहीं। थप्पड़ पड़ने पर उसका सिर पार्टीशन से टकराया था। जिससे उसकी कनपटी पर चोट आई थी।

'मार लो, अपने देश में ला कर तुम मेरे साथ ऐसा व्यवहार करोगे, मैं नहीं जानती थी।'

उसके मुँह से यह वाक्य निकलने की देर थी कि मेरी टाँगें लरज गईं और सारा शरीर ठंडा पड़ गया। हेलेन ने चेहरे पर से हाथ हटा लिए थे। उसके गाल पर थप्पड़ का गहरा निशान पड़ गया था। पार्टीशन के पीछे वह केवल शमीज पहने सिर झुकाए खड़ी थी क्योंकि उसने फ्राक उतार दिया था। उसके सुनहरे बाल छितरा कर उसके माथे पर फैले हुए थे।

यह मैं क्या कर बैठा था? यह मुझे क्या हो गया था? मैं आँखें फाड़े उसकी ओर देखे जा रहा था और मेरा सारा शरीर निरुद्‌ध हुआ जा रहा था। मेरे मुँह से फटी फटी सी एक हुंकार निकली, मानो दिल का सार क्षोभ और दर्द अनुकूल शब्द न पा कर मात्र क्रंदन में ही छटपटा कर व्यक्त हो पाया हो। मैं पार्टीशन के पीछे से निकल कर बाहर आँगन में चला गया। यह मुझसे क्या हो गया है? यही एक वाक्य मेरे मन में बार बार चक्कर काट रहा था...

इस घटना के तीन दिन बाद हमने भारत छोड़ दिया। मैंने मन ही मन निश्चय कर लिया कि अब लौट कर नहीं आऊँगा। उस दिन जो जालंधर छोड़ा तो फिर लौट कर नहीं गया...

सीढ़ियों पर कदमों की आवाज आई। उसी वक्त रसोईघर से हेलेन भी एप्रेन पहने चली आई। सीढ़ियों की ओर से हँसने चहकने और तेज तेज सीढ़ियाँ चढ़ने की आवाज आई। जोर से दरवाजा खुला और हाँफती हाँफती दो युवतियाँ - लाल साहब की बेटियाँ - अंदर दाखिल हुईं। बड़ी बेटी ऊँची लंबी थी, उसके बाल काले थे और आँखें किरमिची रंग की थीं। छोटी के हाथ में किताबें थीं, उसका रंग कुछ कुछ साँवला था, और आँखों में नीली नीली झाइयाँ थीं। दोनो ने बारी बारी से माँ और बाप के गाल चूमे, फिर झट से चाय की तिपाई पर से केक के टुकड़े उठा उठा कर हड़पने लगीं। उनकी माँ भी कुर्सी पर बैठ गई और दोनो बेटियाँ दिन भर की छोटी छोटी घटनाएँ अपनी भाषा में सुनाने लगीं। सारा घर उनकी चहकती आवाजों से गूँजने लगा। मैंने लाल की ओर देखा। उसकी आँखों में भावुकता के स्थान पर स्नेह उतर आया था।

'यह सज्जन भारत से आए हैं। यह भी जालंधर के रहने वाले हैं।'

बड़ी बेटी ने मुस्करा कर मेरा अभिवादन किया। फिर चहक कर बोली, 'जालंधर तो अब बहुत कुछ बदल गया होगा। जब मैं वहाँ गई थी, तब तो वह बहुत पुराना पुराना सा शहर था। क्यों माँ?' और खिलखिला कर हँसने लगी।

लाल का अतीत भले ही कैसा रहा हो, उसका वर्तमान बड़ा समृद्ध और सुंदर था।

वह मुझे मेरे होटल तक छोड़ने आया। खाड़ी के किनारे ढलती शाम के सायों में देर तक हम टहलते बतियाते रहे। वह मुझे अपने नगर के बारे में बताता रहा, अपने व्यवसाय के बारे में, इस नगर में अपनी उपलब्धियों के बारे में। वह बड़ा समझदार और प्रतिभासंपन्न व्यक्ति निकला। आते जाते अनेक लोगों के साथ उसकी दुआ सलाम हुई। मुझे लगा शहर में उसकी इज्जत है। और मैं फिर उसी उधेड़बुन में खो गया कि इस आदमी का वास्तविक रूप कौन सा है? जब वह यादों में खोया अपने देश के लिए छटपटाता है, या एक लब्धप्रतिष्ठ और सफल इंजीनियर जो कहाँ से आया और कहाँ आ कर बस गया और अपनी मेहनत से अनेक उपलब्धियाँ हासिल कीं?

विदा होते समय उसने मुझे फिर बाँहों में भींच लिया और देर तक भींचे रहा, और मैंने महसूस किया कि भावनाओं का ज्वार उसके अंदर फिर से उठने लगा है, और उसका शरीर फिर से पुलकने लगा है।

'यह मत समझना कि मुझे कोई शिकायत है। जिंदगी मुझ पर बड़ी मेहरबान रही है। मुझे कोई शिकायत नहीं है, अगर शिकायत है तो अपने आप से...' फिर थोड़ी देर चुप रहने के बाद वह हँस कर बोला, 'हाँ एक बात की चाह मन में अभी तक मरी नहीं है, इस बुढ़ापे में भी नहीं मरी है कि सड़क पर चलते हुए कभी अचानक कहीं से आवाज आए 'ओ हरामजादे!' और मैं लपक कर उस आदमी को छाती से लगा लूँ', कहते हुए उसकी आवाज फिर से लड़खड़ा गई।